ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218
PP. No.- 212-215

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- IV, Issues-30, YEAR- Oct.-Dec.-2023

भारतीय लघु–चित्र परंपरा में नारी अंकन

1. वैशाली
2. प्रो0 अलका तिवारी

1. शोध अध्येत्री, 2. प्रोफेसर– एन.ए.एस. कालेज, मेरठ, समन्वयक–ललित कला विभाग, चौधरी चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ (उ0प्र0) भारत

Received-05.12.2023, Revised-11.12.2023, Accepted-16.12.2023 E-mail: vaishaliray7@gmail.com

सारांशः ***भारत के आदिम कालीन मनुष्य द्वारा निर्मित चित्रों के द्वारा ही महम मनुष्य की उदय बेला का इतिहास जानने में सक्षम हुए। भारतीय चित्रकला का विकास इन्हीं के हाथों हुआ। जिनके बहुत से उदाहरण भारतवर्ष के विभिन्न प्राचीन गुफाओं में प्राप्त होते हैं। कला भाषा से भी प्राचीन मानवीय उत्पत्ति है, अतः एक दृष्टि से इसे मानव की सार्वकालिक, सर्वसम्मानित भावाभिव्यक्ति का साधन कहा जा सकता है कि मानव ने उसे अपने विकास के आरम्भिक चरण में अपनाया था। भारतवर्ष के विभिन्न प्रागैतिहासिक चित्रों की खोज हो जाने पर यह स्वयं सिद्ध हो जाता है कि मनुष्य में कला की प्रवृत्ति शुरू से ही प्रबल थी।***

कुंजीभूत शब्द– नारी, कला अथवा चित्रकला, सौन्दर्य, आदिम कालीन मनुष्य, उदय बेला, सार्वकालिक, सर्वसम्मानित भावाभिव्यक्ति।

चित्रकला का इतिहास उतना ही पुराना है। जितना कि मानव सभ्यता के विकास का इतिहास। सत्य तो यह है कि चित्र बनाने की प्रवृत्ति सर्वदा से ही हमारे पूर्वजों में विद्यमान रही है। मनुष्य ने जिस समय प्रकृति की गोद में आँखें खोली, उस समय से ही उसने अपने मूक भावनाओं की अपनी तूलिका द्वारा टेढ़ी–मेढ़ी रेखाकृतियों के माध्यम से अभिव्यक्ति की। अपना सांस्कृतिक विकास करने के लिए मानव ने जिन साधनों को अपनाया उनमें चित्रकला भी एक साधन थी।[1]

प्राचीन काल से ही चित्रकला मानव जीवन अभिव्यक्ति बनी हुई थी। आदि से अन्त तक मानव का सारा जीवन चित्रकला से ओतप्रोत था। भारतीय जीवन के हर पहलू को स्पर्श कर चित्रकला ने उसे संवारने का प्रयत्न किया है। चित्रकला में सौन्दर्य की भावना को प्राण संचार करने वाली भावना कहा गया है। कला और सौन्दर्य का चौली–दामन का साथ है। ललित शब्द का अर्थ है–कामनीय, सुन्दर, आँखों को भाने वाला। प्रभु की सृष्टि रचना उसकी कला है और प्रकृति का एक–एक कण उसकी लीला का सौन्दर्य बोध करता है।

'शिव' महामाया की शक्ति से प्रेरित होकर इस विश्व की रचना करते हैं। शिव को जब लीला के प्रयोजन को अनुभूति होता है। शिव को जब लीला के प्रयोजन की अनुभूति होती है। तब महाशक्ति रूपा महामाया से प्रेरित होकर वह जगत की सृष्टि करते हैं इसलिए शिव की लीला सहचरी होने के कारण महामाया को ललिता कहा गया है। इसी महामाया, शक्ति स्वरूपा ललिता द्वारा समस्त ललित कलाओं की उत्पत्ति हुई।[2] क्योंकि कला की अधिष्ठातृ देवी, अपार सौन्दर्य की स्वामिनी स्वयं ललिता है, अतः उनके द्वारा प्रसूत कलाओ का प्रयोजन सौन्दर्य की स्वामिनी स्वयं ललिता है, अतः उनके द्वारा प्रसूत कलाओं का प्रयोजन सौन्दर्य की सृष्टि के अतिरिक्त दूसरा हो भी क्या सकता है? कलाकार सौन्दर्य का उपासक है और यही कारण है कि भारतीय कलाकारों ने सदैव ही नारी को सौन्दर्य की देवी के रूप में प्रतिष्ठित किया है।[3]

अध्ययन का उद्देश्य– इस शोध पत्र का उद्देश्य भारतीय लघु चित्रण शैली में नारी सौन्दर्य एवं नारी अंकन से सम्बन्धित कलाओं का ज्ञान सभी के सम्मुख रखना है।

मुख्य पाठ– भारतीय भाषा में नारी की छवि व्यापक रूप से गढ़ी ओर चित्रित की गई। कला में एक लंबे इतिहास के साथ नारी की छवि की प्रतीकात्मकता को विभिन्न प्रकार के दृश्यों में चित्रित किया गया है। आख्यानों में महिलाओं को अक्सर उर्वरता के प्रतीक, सशक्त और उग्र देवियों के रूप में चित्रित किया जाता रहा है। भारतीय कला में नारी की छवि के संदर्भ में विश्लेषण करने पर हमारा ध्यान 'दृश्य प्रतिनिधित्व' पर जाता है। सदियों से पारम्परिक भारतीय कला में स्त्रियों का वर्गीकरण स्त्री रूप की प्रतिमा, विज्ञान को परिभाषित है। इन छवियों को कुछ मापदंडों के भीतर ही इतनी दृढ़ता से और गहराई से आत्मसात् किया गया है कि ये हमारी सामाजिक व्यवस्था स्पष्ट रूप से प्रतिनिधित्व करती है। नारी मानव जीवन का महत्वपूर्ण अंग है, इसी पर मानव का उद्भव और आघृत है।

वस्तुतः नारी के श्रवण स्पर्श, दर्शन अथवा स्मरण मात्र से ही, चित्त आहुलदित हो जाता है। नारी के ही माध्यम से नर धर्म, अर्थ एवं काम का उपभोग करता है। वह ही गृहलक्ष्मी है। इसीलिए वह मानव के लिए आदणीय है।[4] भारतीय संस्कृति में जहाँ ब्राह्मण के पैर, गाय के पृष्ठ भाग बकरे एवं घोड़े के मुख पवित्र माने गये हैं, वहाँ नारी के नख से शिख, पर्यन्त सभी अंग प्रत्यंग पुनीत है।[5] जहाँ उसकी पूजा होती है। वहाँ देवताओं का वास होता है।[6] अपनी इस महत्ता के कारण ''नारी'' कला के प्रत्येक माध्यम में चाहे काव्य हो, मूर्ति हो, अथवा चित्र हो सर्वत्र छाई हुई है।

जहाँ उसकी काया सौन्दर्य का आगार है, वही वह नर की अपेक्षा अधिक प्रतीक अर्थ से गुफित है वस्तुतः नारीकी कमनीय मूर्ति के बिना कला ही नहीं, विश्व का समस्त विधान अविकसित रहता है नारी का लावणय कला का ललाम भाव है। वह इस बनकर कला में ओतप्रोत हुआ है और अपने अस्तित्व से कला को दर्शनीय बनाता है। स्त्री–चित्रण के बिना कला केवल दर्शन की अनुगमिनी बनकर रह जाती।[7]

ताड़पत्रीय चित्रों के रेखांकन में जो सूक्ष्मता एवं परिष्कार आया वह 12–13 वी शती की कला का विकास नहीं था। बल्कि फारसी चित्रकला का प्रभाव था। आदिम काल से लेकर 1300 ईस्वी तक की भारतीय चित्रकला में हम नारी रूपी की एक विस्तृत चित्र वीर्था देखते हैं, जो संसार के कला–मर्मज्ञों एवं साह्रदय रसिकों को सदा आकर्षित करती रही है।[8] नारी का शरीर

अनुरूपी लेखक/संयुक्त लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- IV, Issues-30, YEAR- Oct.-Dec.-2023

एक रहस्य और चमत्कार से गुंफित होने के साथ–साथ सौन्दर्य का स्रोत भी रहा है।[9] इसलिए नर उसके प्रति आकर्षित रहा है और आदिम काल से ही उसने नारी की आराधना अनेक रूपों में की है। भारतीय कला में उपलब्ध नारी रूपों को देखते हुए उनके अंकन के पीछे कलाकारों के उद्देश्यों को मूलतः तीन प्रकारों में बाटा जा सकता है।

1. धार्मिक उद्देश्य, 2. आलंकारिक उद्देश्य, 3. मिश्रित उद्देश्य

1. धार्मिक उद्देश्य– इसके अन्तर्गत वे नारी मूर्तिया है। जिनका अंकन किसी न किसी धार्मिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए किया गया। चाहे उनकी पूजा मामृदेवी के रूव में होती थी। चाहे वह विष्णु, शिव या बोधसित्वों की शक्ति रूपा थी। अथवा शाक्तो की आदि–शक्ति। व समृद्धि एवं वंशवृद्धि की प्रतीक थी या दैत्यों की संहारिका। प्रत्येक युग में उनका कलागत अस्तित्व बना रहा, भले ही रूप कितना ही क्यों न बदलता रहा है। किन्तु देव वर्ग वहीं रहा जिसकी उपासना समाज में प्रचलित थी।[10]

2. आलंकारिक उद्देश्य– दृश्य कलाओं का मूल उद्देश्य सौन्दर्यमय रूपों के सृजन एवं दर्शन के द्वारा मानव को चाक्षुव आनन्द प्रदान करने के साथ–साथ रसानुभूति करना है। आदिम युग से ही, जबकि उसकी कला अभिचारपरक एवं उपयोगितावादी थी, तब भी उसकी कला में सौन्दर्यानुभूति का अस्तित्व था।[11]

3. मिश्रित उद्देश्य– भारतीय कला में अकसर कलाकार के धार्मिक और अलंकारिक उद्देश्य अपनी अपनी सीमाएँ लाघंकर, एकतान होकर, इठलाती हुई दिव्य सुन्दरियों के रूप में प्रस्फुटित होते हैं। देवालयों, संधारामों और स्तूपों के पावन–परिवेश में धार्मिक नैतिकता एवं सामाजिक प्रतिष्ठा की जंजीरें तोड़कर ये रमणीया अर्ध–देवियों के रूप में प्रतिष्ठि है। चाहे वे वन देवी हो या जल देवी, वे स्तूपों की संरक्षिका–देवी हो, या देवालयों की द्वार–देवी, इन सब के साथ–साथ वे मोहिन रूपा अवश्य है, जो अलौकिक देवी और अलौकिक नारी के मध्य एक सूत्र है।[12]

आदिम काल से लेकर मध्य काल तक आते–आते विभिन्न जातियों के आगमन तथा उनके मिश्रण के फलस्वरूप एवं विभिन्न सम्प्रदायों की विचारधारा से प्रभावित हो, उनका रूप एवं मूर्ति विज्ञान परिवर्तित होता रहा है। फिर भी उनमं नारीत्व की दिव्य शक्तियों का किसी न किसी रूप में अंकन अवश्य मिलता है। कुछ मूर्तियों में देवी के सार्वलौकिक मातृत्व के आदिम–भाव रूप को प्रदर्शित किया गया है। इस प्रकार की मूर्तियों में देवी के पूर्ण उभरे स्तनों को प्रदर्शित किया गया है।

देवी के नितम्ब भारी अंकित है। देवी की गर्भिणी भारी के रूप अथवा शिशु को लिए हुए या दूध पिलाते दिखाया गया है।[13] इस प्रकार की मातृदेवियों की मूर्तियों की परम्परा के पूर्व पाषाण युगीन यूरोप तथा नवपाषाण युगीन आन्टोलिया तथा क्रीट तक में होने का संकेत देते हैं।[14]

भारत में इस प्रकार की एक मृणमूर्ति निवास स्थल (जिला अहमदनगर) से प्राप्त हुई है। यह मृणमूर्ति ताम्रप्रस्तर युगीन स्तर से प्राप्त हुई थी। इसी प्रकार की अन्य मूर्ति धार के निकट बिलवाली (मध्यप्रदेश) से उत्खन्न में मिली। यह ताम्र प्रस्तर तथा आरम्भिक ऐतिहासिक युग के मध्यांतर काल की है। इसी श्रेणी की अन्य मातृदेवी की मृणमूर्तियों कौशाम्बी तथा सोनपुर इत्यादि स्थलों से प्राप्त हुई है। इस प्रकार की देवी मूर्ति के उदाहरण हड़प्पा मोहनजोदड़ों इत्यादि से प्राप्त मृण्यमयी देवी मूर्तिया है। ये पूर्वोक्त मातृदेवियों के विपरीत अधिक सूक्ष्मता से प्रत्येक अंग सहित तथा आभूषणों से अलंकृत है। इनकी साज–सज्जा तथा स्तनों के अपेक्षाकृत छोटे आकार द्वारा वे अपने कौमार्य को व्यक्त करती है। इनकी नासिका प्रमुख तथा नुकीली है जो माथे के साथ सीध में है। आँखे बड़ी तथा गोल है। होंठ मोटे हैं। आँखे, होंठ तथा स्तर अलग से चिपकाएँ गए है। इनकी भुजाए एवं पैर खंडित है। ये देवी मूर्तिया प्रायः नग्न है, सिर्फ कति पर मेखला प्रदर्शित है।[15]

गान्धार, अमरावती, अजन्ता इत्यादि अनेक शैलियाँ में बुद्ध जन्म के दृश्य में महामाया देवी शालवृक्ष पकड़े हुए अंकित है। महामाया देवी की वृक्ष अवलम्बन मुद्रा शाल भंजिका याक्षिका सदृश्य है। गुप्तकाल एवं मध्ययुगीन मन्दिरों के द्वारो पर हाथ में पूर्णकलश लिए मकरवाहिनी एवं कर्मवाहिनी नदी देवियों को मूर्त रूप देने की प्रेरणा भी वृक्ष देवियों से ही मिली है।[16] भारतीय चित्रकला के सर्वप्रथम ऐतिहासिक प्रमाण अजन्ता के भित्ति चित्रों में उपलब्ध होते हैं।

अजन्ता में नारी लज्जा व विनय के प्रतीक स्वरूप चित्रित हुई है। अजन्ता में नारी को प्रेयसी, रामी, परिचारिका, नर्तकी, आसवषायी, माता, अप्सरा व बालिका आदि रूप में चित्रित किया है। चित्रकार उसके अंग प्रत्यंग के छरहरेपन तीखे नक्श तथा भावपूर्ण अंकन के बल पर उसे "सौन्दर्य के सिद्धान्त" के रूप में आलेखित किया है। इसी से उसका नग्न रूप पाश्चात्य, कामुकता वाला न लज्जा व मातृत्व रूप में अंकित हुआ है। (चित्र–51) अजन्ता में नारी का रूप सर्वत्र मोहक और गौरवपूर्ण है। उनके नेत्रों में दिव्य तेज और शरीर की सुडोलता में कुछ ऐसी विशेषता है, जो सौन्दर्य मर्मज्ञों को उसकी
एक–एक रेखा और अंकन अनुपात में दृष्टिगत होता है।[17]

राज्याश्रय में रहने वाले राजस्थानी चित्रकार ने अपनी तूलिका के अनेक विषय बनाए। कुछ विषयों में तो मानव मन की सूक्ष्मतिसूक्ष्म भावनाओं का चित्रण करने में भी कलाकार सफल हुआ है। मनुष्य के ह्रदय की प्रत्येक भावना को अत्यन्त सुन्दरता से इस महान चित्र शैली में महान कलाकारों ने अपने चित्रों में उतार दिया है। राजस्थानी चित्रों का विषय सूक्ष्म, बौद्धिक तथा भावनात्मक है।[18] यही कारण है कि वह प्रतिदिन के कार्य करते हुए साधारण स्त्री–पुरूष को अपनी तूलिका का विषय नहीं बना पाया। बल्कि उसका दृष्टि तो अधिकतर उन नायक–नायिकाओं की ओर यही जिनका कार्य प्रेम करना अथवा विरह में जलना ही था। चाहे उनका रूप राधा–कृष्ण का रहा हो अथवा सामान्य नायक–नायिका का।[19] राजस्थानी चित्रकला को अपनी विशिष्ठ शैली प्रदान वाला किशनगढ़ राज्य राजस्थान के लगभग मध्य में स्थित है। यह स्थान जितना अपने प्राकृतिक सौन्दर्य के लिए प्रसिद्ध है। उतना ही अपनी कला के लिए भी है।[20] यहाँ की चित्र माधुरी के वैशिष्ट्य में एक ऐसी नारी आकृति को पाया, जिसे आज विश्व में 'बनी–ठनी' का नाम दिया जाता

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- IV, Issues-30, YEAR- Oct.-Dec.-2023

है। यह सुकोमलता विश्व में 'भारतीय मोनालिसा' के नाम से प्रसिद्ध है। आज प्रत्येक भारतीय किशनगढ़ चित्रों का रहस्य जानने एवं सौन्दर्य के रसास्वदन हेतु आतुर है।[21]

16वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में हिमाचल प्रदेश तथा जम्मू की सुरम्य घाटियों में प्रस्फुटित होने वाली पहाड़ी शैली मुगल काल शैली से सर्वथा विन्नव भावपूर्ण तथा कलात्मक थी। सम्पूर्ण पहाड़ी चित्रकला में कांगड़ा शैली मुगल एक सर्वोत्तम उपलब्धि रही है। भारतीय संस्कृति को मुखरित करने वाली इस शैली में श्रृंगार के उभय पक्षों का ऐसा मनोहारी चित्रण हुआ है दर्शक ठगा सा उस रूपराशि को देखता रह जाता है। रंगों के माध्यम से प्रेम का ऐसा अनूठा अंकन शायद ही कहीं देखने को मिलता है। काव्य का चित्रकला में रूपान्तर ही कांगड़ा कला का अद्वितीय गुण है। काव्य की पीठिका में प्रवाहमान लयात्मक रेखाओं ने कांगड़ा कला को गेयता दी है। इसे सहज ही शास्त्र संगीत कहा जा सकता है।[22] (चित्र)

पहाड़ी शैलिया में कांगड़ा कलम के चितेरों ने जिस प्रकार नारी छवि के मनोहर अंकन में अपनी कला को निखार करके रख दिया ठीक उसी प्रकार किशनगढ़ शैली के कलाकारों द्वारा नारी रूप का सुलेखन अनुपम है। वास्तविकता को यह है कि किशनगढ़ की चित्रशैली का मूल्यांकन नारी चित्रों की दृष्टि से है। नारी सौन्दर्य का चित्रण जितना भी सम्भव ही सकता था। इन कलाकारों ने दर्शित किया। राधा कृष्ण की मनोहर झांकियाँ प्रस्तुत करने में भी इन कलाकारों ने कमाल किया। स्वर्ग को भी विमुग्ध कर देने वाली इन झांकियों में कल्पना की ऐसी पार दृष्टि है कि पार्थिव जगत में ही बैठकर हम उसका रसपान कर लेते हैं। इस प्रकार के चित्र किशनगढ़ शैली की मौलिक देन है।[23] (चित्र)

राजस्थानी व मुगल शैली का निर्माण एवं विकास एक ही समय हुआ, किन्तु दोनों शैलियों में काफी विभिन्नताएँ भी है। जो दोनों एक दूसरे से भिन्न–भिन्न दर्शाती है। जहाँ राजस्थान कला धार्मिक भक्ति और श्रृंगार से ओतप्रोत है। वही मुगल चित्रकला दरबारी वैभव से स्पर्शित व अलंकरण प्रधान है। एक की यथार्थवादी है तो दूसरी कल्पना प्रधान। राजस्थानी चित्रकला भारतीय काव्यों के सूक्ष्म अर्थ को व्यक्त करने वाली है, तो मुगल शैली मुगल इतिहास तथा उसकी संस्कृति का विवरण प्रस्तुत करती है। मुगल चित्रकला में श्रृंगार से सम्बन्धित चित्रों की रचना दरबारी शान शौकत वासना और सामन्तीय परिवेश की झलक स्पष्ट देखी जा सकती है। रीतिकालीन साहित्य पर आधारित नायक–नायिकाओं के स्फुट चित्रों का चित्रण ही इस शैली की विशेष देन है। कुछ राजस्थानी चित्रों पर मुगल का प्रभाव इतना ज्यादा हावी होता हुआ नजर आता है। रंगों का प्रयोग, विषयों का प्रयोग तथा पृष्ठभूमि के अंकन में इस शैली के चित्र भारतीय परम्परा का प्रयोग करते है।[24](चित्र)

निष्कर्ष– इस प्रकार कहा जा सकता है कि नारी आकृतियों के चित्रण और उसकी प्रस्तुतिकरण में भारतीय लघु चित्रण शैली कलाकारों ने अपनी कला दक्षता का परिचय बड़ी कुशलता के साथ दिया है। इन नारी आकृतियों के चित्रण में चित्रकारों ने कमाल ही कर दिखाया है। भावों की गहनता और विशिष्टता, विषयानुकल अंकन तथा चयन की सुघड़ता सौन्दर्य एवं लावण्य परियोजना तथा कला के विभिन्न अंगों आदि के परिप्रेक्ष्य में इन चित्रों का सौन्दर्य देखते ही बनता है। चित्रकारों ने नारी के अंग प्रत्यंग के छरहरेपन, तीखे नक्श तथा भावपूर्ण अंकन ने ''सौन्दर्य के सिद्धान्त'' पर बल दिया है। इन लघु चित्रण शैलियों में नारी का रूप सर्वत्र मोहक और गौरवपूर्ण है।

1. बालगोपाल स्तुति – ताड़पत्रीय ग्रंथ चित्र (16वीं शती का अन्तिम चतुर्थास)
2. अजन्ता (गुफा सं०–2) भावमग्ना।
3. बनी ठनी (किशनगढ़)
4. कृष्ण एवं गोपियाँ (कांगड़ा)।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. प्रताप रीता, भारतीय चित्रकला एवं मूर्तिकला का इतिहास, जयपुर 2008.
2. गैरोला वाचस्पति,भारतीय चित्रकला, मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटैड, इलाहाबाद, 1963 पृष्ठ 27.
3. अग्रवाल, डॉ० आर०ए० कला विलास इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ 2003 पृष्ठ 109.
4. वराहमिहिर – वृहत्संहिता 74.4.
5. वही – 74.8.
6. महाभारत – 13.46.6.
7. मौद हेज–द वूमेन इन इंडियन आर्ट पृष्ठ – 8.
8. अग्रवाल वासुदेव शरण – भारतीय कला का अनुशीलन 1958 पृष्ठ – 16.
9. मोती चन्द्र – जैन मिनीचेयर पैटिंग्स फ्रॉम वैस्टर्न इड़िया पृष्ठ – 26.
10. चतुर्वेदी जगदीश चन्द – समन्वय की गंगा पृष्ठ – 83.
11. गुप्त, जगदीश – प्रागैतिहासिक भारतीय चित्रकला पृष्ठ – 564–65.
12. दास गुप्ता, शशि भूषण – इवोल्यूशन ऑफ मदर वर्शिप इन इंडिया (ग्रेट वोमेन ऑफ इंडिया–सं० मध्वानन्द तथा मजूमदार) पृष्ठ – 85.
13. मरे, एम०ए० – फीमेल फर्टिलिटी फिंगर्स जर्नल ऑफ द रॉयल एन्थ्रोपोलोजिक्ल इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेट ब्रिटेन एण्ड आयरलैण्ड 1934 पृष्ठ – 93.
14. वही पृष्ठ – 112.

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-16, No.- IV, Issues-30, YEAR- Oct.-Dec.-2023

15. कुमार, स्वामी आनन्द – आर्केइड इंडियन टेराकोटाज पृष्ठ – 24.
16. कुमार, स्वामी आनन्द – यक्षाज–पृ–भाग 1 पृ०सं० – 36.
17. अग्रवाल, डॉ० आर०ए० – भारतीय चित्रकला का विवेचन इण्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस, मेरठ 2007 पृष्ठ – 47.
18. राजपूत पेटिंग निबन्ध – शर्मन ली।
19. मास्टर पीसेज ऑफ फीमेल फोर्म इन इंडियन आर्ट – रूस्तम जे० मेहता पृष्ठ – 38.
20. शर्मा, डी० लोकेश चन्द्र – भारतीय चित्रकला का संक्षिप्त इतिहास, कृष्णा प्रकाशन मीडिया (प्रा०) लि० मेरठ 2002 पृष्ठ – 74.
21. अग्रवाल, डॉ० आर०ए० – भारतीय चित्रकला का विवेचन इन्टरनेशनल पब्लिशिंग हाउस मेरठ 2007 पृष्ठ– 110.
22. गैरोला वाचस्पति,भारतीय चित्रकला, मित्र प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद 1963 पृष्ठ – 163.
23. अशोक ईरान की चित्रकला अलीगढ़ पृष्ठ – 89.
24. उपरोक्त ।

*****